PCPNDT अधिनियम–सुसंगत निर्णयज विधि
(PCPNDT Act- Relevant Case Law)

PCPNDT अधिनियम, 1994 में रही कमियों को दूर करने से सम्बन्धित न्यायिक निर्णय

Centre for Enquiry into Health and allied Themes (CEHAT) and others Vs. Union of India AIR 2003 SC 3309

यद्यपि केन्द्र सरकार द्वारा वर्ष 1994 में PCPNDT अधिनियम बनाया गया और वर्ष 1996 में इसके नियम भी बना दिये गये परन्तु इसके क्रियान्वयन की प्रभावी व्यवस्था नहीं की गई। इस पृष्ठभूमि में स्वयंसेवी संगठनों ने जनहित याचिका दायर की जिस पर **माननीय सर्वोच्च न्यायालय** ने विस्तृत निर्देश जारी किये जिनके अनुसरण में वर्ष 2003 में इस अधिनियम में व्यापक संशोधन किये गये।

Voluntary Health Association of Punjab Vs. Union of India- AIR 2013 SC 1571

CEHAT बनाम भारत संघ में दिये गये विभिन्न निर्देशों की पालना सुनिश्चित न होने पर यह दूसरी जनहित याचिका **माननीय सर्वोच्च न्यायालय** के समक्ष पेश की गयी। इस याचिका में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा कन्याओं के साथ भेदभावपूर्ण व्यवहार के सामाजिक कारणों पर भी चर्चा करते हुए विभिन्न महत्वपूर्ण निर्देश दिये गये।

हेमन्ता रथ बनाम भारत संघ AIR 2008 (उड़ीसा) AIR 2008 Orrisa 71

माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा उक्त सीहाट मामले में निर्देश देने एवं इस अधिनियम में संशोधन के बावजूद राज्य सरकारों द्वारा प्रभावी कदम नहीं उठाये गये जिस पर **माननीय उड़ीसा उच्च न्यायालय** के समक्ष प्रस्तुत जनहित याचिका में राज्य सरकार को छः माह में प्रभावी क्रियान्वयन हेतु आवश्यक व्यवस्था करने के निर्देश दिये गये।

एस0के0 गुप्ता बनाम भारत संघ – डी0बी0पी0आई0एल0 संख्या–3270/2012– आदेश दिनांक 30.03.2012,23.05.2012,16.09.2014,25.11.2014,15.04.2015

माननीय राजस्थान उच्च न्यायालय के समक्ष इस आधार पर जनहित याचिका प्रस्तुत की गई कि राज्य में इस अधिनियम का प्रभावी क्रियान्वयन नहीं हो पाया है। बच्चियों के उत्थान व कल्याण की व्यवस्था भी नहीं है जिसके सम्बन्ध में वांछित निर्देश जारी किये जावे।

माननीय मुख्य न्यायाधिपति श्री अरूण मिश्रा की खण्ड पीठ के आदेश दिनांक 30.03.2012 एवं 23.05.2012 द्वारा इस अधिनियम के प्रावधित एफ–फार्म को ऑन लाईन भरे जाने के निर्णय को उचित ठहराया गया। साथ ही इस अधिनियम के तहत राज्य सरकार द्वारा जारी निर्देशों को अपने निर्णय का भाग बनाया गया एवं आपराधिक प्रकरणों के त्वरित निस्तारण के निर्देश दिये गये।

माननीय कार्यवाहक मुख्य न्यायाधिपति श्री सुनील अम्बवानी की खण्ड पीठ के आदेश दिनांक 16.09.2014 द्वारा सम्बन्धित अधिवक्तागण एवं रजिस्ट्रार जनरल, राजस्थान उच्च न्यायालय को इस अधिनियम के तहत दायर प्रकरणों की स्थिति न्यायालय के समक्ष रखने एवं राजस्थान राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण को इस विषय पर कार्यशाला आयोजित करने के निर्देश दिये गये। तत्पश्चात पारित आदेश दिनांक 25.11.2014 के आदेश द्वारा लम्बित आपराधिक मामलों के निस्तारण में देरी पर चिन्ता व्यक्त करते हुए सभी आपराधिक प्रकरणों और उनकी कार्यवाही स्थगित करने वाली याचिकाओं के समयबद्ध निस्तारण के निर्देश दिये गये।

PCPNDT अधिनियम को चुनौती देने वाली याचिकाओं पर महत्वपूर्ण निर्णय

विनोद सोनी बनाम भारत संघ – 2005 Cr.L.J.3408 (Bombay)

इस याचिका में महिला को अपने बच्चे का लिंग चयन करने एवं परिवार का स्वरूप निर्धारित करने का मूल अधिकार बताते हुए इस अधिनियम को संविधान के अनुच्छेद 14 व 21 के अन्तर्गत चुनौती दी गई लेकिन माननीय उच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 21 में लिंग चयन का अधिकार शामिल नहीं मानते हुए याचिका खारिज कर दी।

विजय शर्मा बनाम भारत संघ – AIR 2008 Bombay 29

इस प्रकरण में विनोद सोनी वाले मामले के आधारों के साथ साथ यह भी कहा गया कि एम0टी0पी0 अधिनियम 1971 कई परिस्थितियों में गर्भपात की अनुपति देता है जबकि PCPNDT अधिनियम लिंग चयन के आधार पर गर्भपात को प्रतिबंधित करता है जो असंवैधानिक है। **माननीय बम्बई उच्च न्यायालय** ने निर्धारित किया कि PCPNDT अधिनियम लिंग चयन को प्रतिबंधित करता है एवं एम0टी0पी0 अधिनियम भी लिंग चयन की अनुमति नहीं देता है। इन दोनों के उददेश्य अलग हैं। इनमें कोई विरोधाभास नहीं है। इस अधिनियम से संविधान के किसी मूल अधिकार का उल्लंघन नहीं होता है।

लिंग परीक्षण करने में सक्षम सभी संस्थानों का पंजीकरण आवश्यक हैं

क्वॉलिफाईड प्राइवेट मेडिकल प्रेक्टिशर्स एण्ड होस्पिटल ऐसोसियेशन बनाम केरल राज्य 2006 (4) केरल लॉ जनरल – 81

इस प्रकरण में यह अनुतोष चाहा गया कि ऐसी लेब्रोटरी तथा निदान क्लिनिक जो अल्ट्रासोनोग्राफी द्वारा लिंग परीक्षण नहीं करते हैं, उन्हे पीसीपीएनडीटी अधिनियम के दायरे से बाहर रखा जावे। **माननीय केरल उच्च न्यायालय** ने ऐसे चिकित्सालयों को पीसीपीएनडीटी अधिनियम के दायरे से बाहर मानने से इन्कार कर दिया परन्तु यह अभिनिर्धारित किया कि इस अधिनियम का अन्तर्गत पंजीकरण केवल ऐसे जेनेटिव काउन्सलिंग सेन्टर तथा जेनेटिव लेबोरेट्रिज के लिए आवश्यक होगा, जो RRE-NATAL DIAGNOSTIC TECHNIQUES अपनाते हैं। साथ ही समुचित प्राधिकारियों को यह स्वतंत्रता दी

गयी कि वह किसी भी सेन्टर या लेबोरेट्रिज का यह सुनिश्चित करने के लिए निरीक्षण कर सकते हैं कि पीसीपीएनडीटी अधिनियम के प्रावधानों का उल्लंघन तो नहीं हो रहा है।

जेनेटिक काउन्सलिंग सेन्टर एवं जेनेटिक काउन्सलिंग लेब्रोटरी के लिए पीसीपीएनडीटी अधिनियम के अन्तर्गत पंजीकरण कराना आवश्यक है।

समुचित प्राधिकारियों को ऐसे संस्थानों के निरीक्षण करने एवं प्रावधान का उल्लंघन पाये जाने पर पंजीकरण के निलम्बन की शक्तियां प्राप्त है।

अल्ट्रासाउण्ड क्लिनिक चलाने के लिए निर्धारित योग्यता आवश्यक है।

अनिल कुमार मिश्रा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य MANU/UP/0514/2011

इस प्रकरण में याचिका कर्ता के पास BHMS की डिग्री थी तथा वह होम्योपैथी मेडिसन बोर्ड के साथ पंजीकरण था। याचिका कर्ता ने पीसपीएनडीटी नियमों के नियम 6 के अन्तर्गत अल्ट्रासाउण्ड क्लिनिक का पंजीकरण करवाया। पंजीकरण के उपरान्त उन्हें समुचित प्राधिकारी द्वारा यह कारण बताओ नोटिस दिया गया कि उनके पास आवश्यक अर्हता नहीं है एवं क्यों न उसके अल्ट्रासाउण्ड क्लिनिक का पंजीकरण कर दिया जाये। याचिका कर्ता ने इस कारण बताओं नोटिस को इस आधार पर चुनौती दी कि उसकी अर्हताओं का सत्यापन करने के उपरान्त ही अल्ट्रासाउण्ड क्लिनिक का पंजीकरण किया गया था और पंजीकरण के उपरान्त अब इसे निरस्त नहीं किया जा सकता।

माननीय इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने पीसीपीएनडीटी अधिनियम की धारा 6 तथा पीसीपीएनडीटी के नियम 3 के प्रावधानों का विश्लेषण कर यह पाया कि याचिकाकर्ता न तो गायनेकोलॉजिस्ट था और न ही पिडियाट्रिशियन था। उसके पास जेनेटिक काउन्सलिंग के लिए भी कोई योग्यता नहीं थी। वह मेडिकल प्रेक्शिअनर्स, रेडियोलोजिस्ट या जेनेटिक नहीं था और न ही भारतीय मेडिकल कॉन्सिल एक्ट में पंजीकृत था। ऐसी परिस्थितियों में माननीय उच्च न्यायालय द्वारा Estoppel का सिद्धान्त इन परिस्थितियों में लागू होना नहीं माना एवं याचिका खारिज कर दी।

फार्म–F के प्रपत्र में सभी इन्द्राज सही व सटीक करने की बाध्यता है, इसका उल्लंघन दण्डनीय है।

अमिता आर. पटेल बनाम गुजरात राज्य MANU/GJ/1040/2008

इस प्रकरण में याचिका कर्ता के विरूद्ध पीसीपीएनडीटी अधिनियम के उल्लंघन के लिए इस आधार पर परिवाद पेश किया गया कि उसके द्वारा प्रेषित किये गये फॉर्म–एफ पर न तो निदान का विवरण था और न ही चिकित्सक के हस्ताक्षर थे। याचिका कर्ता का यह आधार था कि उसके द्वारा पीसीपीएनडीटी अधिनियम के सभी प्रावधानों की पालना की गयी है अतः दुर्भावनावश पेश परिवाद को अपास्त किया जावे।

माननीय गुजरात उच्च न्यायालय ने इस प्रकरण में पीसीपीएनडीटी अधिनियम व इसके अन्तर्गत बनाये गये नियमों की विस्तृत व्याख्या कर यह पाया कि याचिका कर्ता द्वारा अधिनियम के प्रावधानों का उल्लंघन किया गया था एवं परिवाद पर आधारित आपराधिक अभियोजन को अपास्त करने का कोई कारण नहीं था।

परिवाद पेश करने के लिए प्राधिकृत व्यक्ति एवं प्रक्रियात्मक त्रुटियों के सम्बन्ध में प्रतिपादित विधिक स्थिति

स्व–प्रेरणा से बनाम गुजरात राज्य 2009 क्रिमिनल लॉ जरनल 721

यह **माननीय गुजरात उच्च न्यायालय** की पूर्ण पीठ का महत्वपूर्ण निर्णय है जिसमें पूर्ण पीठ को निम्न चारः–

1. क्या पीसीपीएनडीटी अधिनियम की धारा28 के अन्तर्गत न्यायालय समुचित प्राधिकारी द्वारा अधिकृत अधिकारी के परिवाद पर अपराध का प्रसंज्ञान ले सकता है ?
2. क्या पीसीपीएनडीटी अधिनियम की धारा–4 की उपधारा–3 के प्रावधानों के अन्तर्गत यह आवश्यक है कि परिवाद में धारा–5 व 6 के प्रावधानों के उल्लंघन का स्पष्ट आक्षेप हो?
3. क्या धारा 5 व 6 के उल्लंघन को साबित करने का भार समुचित प्राधिकारी पर होता है?
4. क्या फॉर्म–एफ को भरे जाने में कोई कमी रहना, केवल एक प्रक्रियात्मक त्रुटि है?

माननीय गुजरात उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ ने पीसीपीएनडीटी अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों का विस्तृत विवेचन करने के उपरान्त बिन्दु संख्या–1 के संदर्भ में यह मत प्रतिपादित किया कि धारा–28 के प्रावधानों के अन्तर्गत न केवल समुचित प्राधिकारी द्वारा परिवाद पेश किया जा सकता है बल्कि राज्य सरकार या केन्द्र सरकार या समुचित प्राधिकारी द्वारा अधिकृत किये गये व्यक्ति द्वारा भी परिवाद पेश किया जा सकता है।

बिन्दु संख्या–2 व 4 के सम्बन्ध में यह अभिनिर्धारित किया गया कि पीसीपीएनडीटी व इसके अन्तर्गत बनाये गये नियमों का उददेश्य अधिनियम के प्रावधानों का प्रभावी क्रियान्वयन किया जाना है एवं फलस्वरूप प्रक्रियात्मक पहलुओं की पूर्ण रूप से सख्ती से पालना आवश्यक है।

इस प्रकार यह पाया गया कि उत्तरदायी व्यक्ति द्वारा सही तरीके से रिकार्ड संधारित नहीं किया जाना अपने आप में धारा–5 व 6 के प्रावधानों के उल्लंघन के तुल्य है।

प्रश्न संख्या–3 के सम्बन्ध में यह प्रतिपादित किया गया है कि धारा 5 व 6 के उल्लंघन को साबित करने का भार समुचित प्राधिकारी पर है।

पीसीपीएनडीटी अधिनिमय में लिंग चयन के विज्ञापन पर प्रतिबन्ध से सम्बन्धित निर्णय

सत्य त्रिलोक केसरी उर्फ सत्य नारायण बनाम महाराष्ट्र राज्य 2012(6) एल जे सोफट 389

इस प्रकरण में याचिका कर्ता द्वारा एक दैनिक समाचार पत्र में यह लेख छापा गया था कि लड़का कैसे पैदा किया जावे। उसके विरूद्ध लिंग चयन के विज्ञापन से सम्बन्धित अभियोजन प्रारम्भ किया गया, जिसे याचिका कर्ता द्वारा इस आधार पर चुनौती दी गयी कि उसका लेख उसके द्वारा की गयी रिसर्च पर आधारित था। जिसका अभिप्राय लिंग चयन का विज्ञापन कभी नहीं हो सकता था।

माननीय बम्बई उच्च न्यायालय ने इस प्रकरण में यह पाया कि याचिकाकर्ता ने बहुत चतुराई से, लेख के माध्यम से, लिंग चयन की सुविधा का विज्ञापन किया था और उसका कृत्य पीसीपीएनडीटी अधिनियम की धारा 22(1), (2) का उल्लंघन था।

पीसीपीएनडीटी अधिनियम में प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज करना वैध

डॉ0 वर्षा गौतम बनाम उत्तर प्रदेश राज्य MANU/UP/0857/2006

माननीय इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि पीसीपीएनडीटी एक्ट के अन्तर्गत प्रत्येक अपराध संज्ञेय है जिसके सम्बन्ध में प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की जा सकती है।

तलाशी व सोनोग्राफी मशीन की जब्ती से सम्बन्धित निर्णय

डॉ0 सुभाषणी महेश कंरजकर बनाम कोल्हापुर म्यूनिसिपल कॉरपोरेशन

यह निर्णय सोनोग्राफी मशीन की जब्ती के सम्बन्ध में माननीय बम्बई उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ का एक महत्वपूर्ण निर्णय है। इस निर्णय से पूर्व **माननीय बम्बई उच्च न्यायालय** के एकल न्यायाधीश के भिन्न–भिन्न दो पीठों के अलग–अलग निर्णय थे। प्रथम मत यह था कि पीसीपीएनडीटी अधिनियम की कार्यवाही के दौरान सोनोग्राफी मशीन जब्त नहीं की जा सकती है जबकि दूसरे मत के अनुसार ऐसा किया जा सकता था। एकल न्यायाधीशों के विरोधाभासी मत होने के कारण मामला पूर्ण पीठ के समक्ष आया। पूर्ण पीठ द्वारा पीसीपीएनडीटी के नियम 12 के स्पष्टीकरण 2 व 3 का विश्लेषण कर यह निष्कर्ष निकाला गया कि इस नियम का कार्यवाही के दौरान सोनोग्राफी मशीन को जब्त किया जा सकता है।

.

. **पंजीकरण निरस्त करना एवं आपराधिक कार्यवाही दोनों भिन्न है**

चित्रा अग्रवाल बनाम उत्तरांचल राज्य ए0आई0आर0 2006 यू0टी0आर0 78

इस मामले में **माननीय पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय** द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि आपराधिक कार्यवाही एवं पंजीकरण के निरस्तीकरण की कार्यवाही, दोनों भिन्न–भिन्न कार्यवाहियां हैं, जो साथ–साथ चल सकती है।

पीसीपीएनडीटी एक्ट के अन्तर्गत संस्थित मामलों में पुलिस रिपोर्ट से अन्यथा संस्थित वारन्ट मामलों के लिए निर्धारित प्रक्रिया अपनायी जायेगी

डॉ0 रविन्द्र बनाम महाराष्ट्र राज्य 2012(10) एज0जे0 सोफ्ट 138

इस प्रकरण में यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया गया है कि पीसीपीएनडीटी अधिनियम के अपराधों के लिए तीन वर्ष तक के कारावास का प्रावधान है एवं परिवाद पर ही प्रसंज्ञान लिया जा सकता है। अतः इनका विचारण पुलिस रिपोर्ट से अन्यथा संस्थित वारन्ट मामलों की भांति होगा, जिसमें आरोप पूर्व साक्ष्य लेखबद्ध किया जाना आवश्यक है।न्यायालय बिना साक्ष्य लेखबद्ध किये सीधे ही आरोप विरचित कर विचारण प्रारम्भ नहीं कर सकता है।

आपराधिक न्यायालय का कर्तव्य–निर्दोष को सजा नहीं तो दोषी भी छूटे नहीं

Hema v. State, through Inspector of Police, Nadras, 2013(1)WLC(SC)Cri. 280 Hon'ble Apex Court ovserved, " Where our criminal justice system orovides safeguards of fair trial and innocence till proven guilty to an accused, there it also contemplates that a criminal trial is meant for doing justice to all, the accused, the society and a fair chance to prove to the prosecution. Then alone can law and order be maintained. the courts do not merely discharge the function to ensure that no innocent man is punished, but also that a guilty man does not escape. Both are public duties of the Judge. During the course of the trial, the learned Presiding Judge is expected to work objectively and in a correct erspective. Where the prosecution attempts to misdirect the trial on the basis of peprfunctory or designedly defective investigation, there the court is to be deeply cautious and ensure that despite such an attempt, the determinative process is not subverted. For truly attaining this object of a "fair trial" the court should leave no stone unturned to do justice and protect the interest of the society as well.

Ambica Prasad & ors. v. Delhi Administration, AIR 2000 SC 718

Hon'ble Apex Court observed that in a case of fefective investigation it would not be proper to acquit the accused if the case is otherwise establisheed conclusively. A criminal trial is meant for doing justice to the accused, victim and the society so that law and order is maintained, A Judge does not preside over a criminal trial merely to seee that no innocent man is punished. A judge also presided to see that a guilty man does not escape. One is as important as the other. Both are public duties, which the Judge has to perform.

State of U.P. Vs. Ram Veer Singh and Another 2007(6) Supreme 164,

Hon'ble the Apex Court has helf that the paramount consideration of the Court is to ensure that miscarriage of justice is prevented. A miscarriage of justice which may arise from acquittal of the guilty is no less than from the conviction of an innocent. In a case where admissible evidence is ignored, a duty is cast upon the appellate court to re-appreciate the evidence where the acccused has been acquitted, for the purpose of ascertaining as to whether any of the accused really committed any offence or not."

परिवाद या प्रथम सूचना रिपोर्ट में घटना का विस्तृत विवरण आवश्यक नहीं है

State of U.P. Vs. Harban Sahai & others, 1998 (2) SCR 1056

Hon'ble Apex Court held FIR is not a chronicle of the exhaustive details of the occurence, not is it a catalogue of everything including minor particulars of the events which took place, for jettisoning an otherwise sturdy account of the eye-witness is not a commendable approach in evaluation of evidenc.

गवाहों की संख्या का कोई महत्व नहीं–किसी तथ्य को साबित मानने के लिए एकल साक्षी की विश्ववसनीय साक्ष्य पर्याप्त

Chittar Lal v. State of Rajasthan AIR 2003 SC 3590

Hon'ble Apex Court observed that it cannot be said that conviction should not have been made on the basiss of a single witness's testimony. The legislative recognition of the fact that no parlticular number of witnesses canb be insisted upon is amply reflected in Section 134 of Evidence Act, 1872. Administration of justice can be affected and hampered in number of witnesses were to be insisted upon. It is not seldom that a crime has been committed in the presence of one witness, leaving aside those cases which are not of unknown occurence where detemination of guilt depends entirely on circumstantial evidence. if plurality of witnesses would have been the legislative intent, caseds whetre the testimony of a single witness only could be available, in number of crimes offender would have gone unpunished. It is the quality of evindence of the single witness whose testimony has to be tested on the touchstone of credibility and reliability. If the testimony is found to be reliable, there is no legal impediment to convict the accused on such proof. iIt is the quality and not the quantity of evidence which is necessary for proving or disproving a fact.

हितबद्ध साक्षीगण की साक्ष्य पूरी तरह अविश्वसनीय नहीं होती, सिर्फ अधिक सावधानी के साथ विश्लेषण एवं मूल्यांकन योग्य होती है

Mallanna v. State of Karnataka reported in (2007) 8 SCC 523,

Hon'ble Apex Court held that the evidence of interested witnesses cannot be thrown out and the only requirement for the Court is to consider their evidence with great care and caution and if such evidence does not satisfy the test of credibility, then the cour can disbelieve the same.

Ponnam Chandraiah v. State of A.P., AIR 2008 SC 3209

Hon'ble Court observed that in regard to the intestednes of the witnesses for futrthering the prosecution version, relationship is not a factor to affect the credibility of a witness. It is more often that not that a relation would not conceal the actual culprit and make allegations against an innocent person. Foundation has to belaid if a plea of false implication is made. In such cases the court has to adopt a careful approach and analyse evidence to find out whether it is cogent and credible. The ground that the witness being a close relative and consequently being a partisan witness, should not be relied upon, has no substance.

पक्षद्रोही साक्षी की साक्ष्य पूरी तरह अविश्वसनीय नहीं है, बल्कि उसका विश्वसनीय भाग काम में लिया जा सकता है

Ramesh Harijan v. State of U.P. AIR 2012 SC 1979

Honb'le Apex Court held that it is a settled legal proposition that the evidence of a prosectution witness cannot be rejected in toto merely because the prosecution chose to treat him as hostile and cross examine him. The evidence of such witnesses cannot be treated as effaced or washed off the record altogether but the same can be accepted to the extent that their version is found to be dependable on a careful scrutiny thereof.

State of U.P. v. Ramesh Prasad Misra & Anr., AIR 1996 SC 2766,

this court held that evidence of a hostile witness would not be totally rejected if spoken in favour of the prosecution or the accused but required to be subjected to close scrutiny and that portion of the evidence which is consistent with the case of the prosecution or defence can be relied upon.

Thus, the law can be summarised to the effect that the evidence of a hostile witness cannot be discarded as a whole, and relevant parts thereof which are admissible in law, canbe used by the prosecution or the defence.

साक्ष्य में मामूली विसंगतियों को अनुचित महत्व नहीं देना चाहिए

Appabhai & Anr. V. State of Gujarat, AIR 1988 SC 696

Hon/ble Apex Court has cautioned the courts below not to give undue importance to minor discrepancies which do not shake the badsic version of the prosecution case. The court by calling into aid its vast experience of men and matters in different cases must evaluate the entire material on record by excluding the exaggerated version fiven by any witness for the reason that witnessed now a days go on adding embellishments to their version erhaps for the fear of their testimony being rejected by the court. However, the courts should not dis-velieve the evidence of such witnesses altogether if they are otherwise trustworthy.

तुच्छ या छोटे–मोटे विरोधाभास के कारण वाह की साक्ष्य अविश्वसनीय नहीं है

Babasahed Apparao Patil v. State of Maharashtra, 2008(15) SCALE 205

Hon'ble Apex Court observed that some discrpancies in the ocular account of a witness, unless those are vital, cannot per se affect the credibility of the evidence of the witness. nless the contradictions are material, the same cannot be used to jettison the evidence in its entirety. Trivial discrepancies ought not to obliterate otherwise acceptable evidence. Merely because there is inconsistency in evidence, it is not sufficient to impaire the credibility of the witness. It is only when discrepancies in the evidence of a witness are so inncompatible with the credibility of his version that the court would be justified in dicarding his evidenc.

Swaran Sing v. State of Punjab, (2000) 5 SCC 668

Hon'ble Apex Court observed that minor discrepancies in the testimony of investigating office due to delayed trial, does not affect the credibility of the prosecution case as it is not unlikely that hc would not remember the details of the investigation due to passage of the time.

साक्षी के कथन की अधिकांश बाते असत्य साबित होने पर भी शेष सत्य बातों पर विश्वास किया जा सकता है

Sucha Singh v. State of Punjab, AIR 2003 SC 3617,

Hon'ble Apex court had taken note of its various earlier judgements and held that even if major prortion of the evidence is found to be deficient, in case residue is sufficient to prove guilt of an accused, it is the duty of the court to separate grain from chaff. Falsity of particular material witness or material particular would not ruin it from the beginning to end. The masim falsus in uno falsus in omnibus has no application in India and the witness cannot be branded as a liar. In case this maxim is aaplied in all the cases it is to be feared that administration of criminal justice would coe to a dead stop. Witnesses just cannot help in giiving embroidery to a story, however , true in the main. Therefore, it has to be appraised in each case as to what extent the evidence is worthy of credence, and merely because in some respects the court considers the same to be insufficient or unworthy of reliance, it does not necessarily follow as a matter of law that it must be disregarded in all respects as well.

सिर्फ स्थानीय व्यक्तियों के साक्ष्य में नहीं आने के कारण ही अभियोजन कहानी अविश्वसनीय नहीं हो जाती है

State of U.P. vs. Anil Singh, Air 1988 Sc 1998

Hon'ble Apex Court ovserved that the public are generally reluctant to come forward to depose before the Court. It is, therefore, not correct to reject the prosecution version only on the ground that ll witnesses to the occurrence have not been examined. Nor it is proper to reject the case for want of corroboration bye independent witnesses if the case made out is otherwise true and acdeptable. It is the duty of the Court to cull out the nuggets of truth from the evidence ubnless there is reason to believe that the inconsistencies or falsehood are so glaring as utterly to destroy confidence in the witnesses. It is necessary to remeber that a jude does not preside over a criminal trial merely to see that no innocent man is punished. A Judge also presides to see that a guilty man dos not escape. One is as important as the other. Both are public duties which the Judge has toperform The Court gabe its anxious consideration to all material facts and circumstances of the ase and came to the conclusion that the decision of the High court could not be supported.

आदमी झूठ बोल सकता है लेकिन परिस्थितयां झूंठ नहीं बोलती, इस क्रम में परिस्थितिजन्य साक्ष्य के विश्लेषण के संबंध में मार्गदर्शन

Vijay Kumar v. State Gove. of NCT of Delhi 2010 AIR SCW 3954,

Hon'ble Apex Court ovserve, "in dealing with circumstantial evidence there is always a danger that conjecture or suspicion lingering on mind may take place of proof... However, it is no derogation of evidence to say that is is circumstantial. Human agency may be faulty in expressing picturisation of actual incident, but the circumstances cannot fail ... In cases where evidence is of a circumstantial nature, the circumstances from which the conclusion of guilt is to be drawn should, in the first instance, be fully established. Each fact sought to be relied upon must be proved individually. However, in applying this principle, a distinction must be made between facts called primay or basic on the one hand and inference of facts to be drawn from them, on the other. With regard to proof of primary facts, the court has to judge the evidence and decide whether that evidence proves a particular fact and if that

fact is proved, the question whether that fact leads to an inference of guilt of the accused person shoulbd be considered, In dealing with this aspect of the problem, the doctrine of benefit of doubt applies. Although, there should not be any missing links in the case, yet it is not essential that each of the links must appear on the surface of the evidence adduced and some of these links may habe to be inferred from the proved facts. in Drawing these inferences, the court must have regard to the common course of natural events and to human conduct and their relations to the facts of the particular case... the court has to consider the total cumulative effect of all the proved facts, each one of which reinforces the conclusion of guilt and if the combined effect of all these facts taken together is conclusive in establishing theguilt of the accused, the conviction would be justified even though it may be that one or more of these facts by itself or themselves is, or are not decisive. The facts established should be consistent only with the hypothesis of the guilt of the accused and should exclude every hypothesis, except the one sought to be proved.

गवाहों की रंजिश दुधारी तलवार है, ऐसे साक्षी की साक्ष्य का विश्लेषण अतिरिक्त सावधानीपूर्वक आवयश्यक है, लेकिन रंजिश के कारण से साक्ष्य नकारे जाने योग्य नहीं है

Anil Rai V. State of Bihar, AIr 2001 SC 3173

Hon'ble Apex Court observed that the admitte position of law is that enmity is a double edged weapon which can be motive for crime as also the ground for false implictation of the accused persons. In case of inimical witnesses, the courts are required to scrutinize their testimon with anxious care to find out whether their testimony inspires confidence to be acceptable notwithstanding the existence of enmity.

Anil Rai v. State of Bihar, AIR 2001 Sc 3173

Hon'ble Apex Court observed that the testimony of the innimical eye witnesses can be relied upon if it is consistent and reliable. It cannot be discarded merely on the ground of alleged animosity.

आपराधिक प्रकरण का निर्णय न्याय दृष्टान्तों पर आधारित होने के बजाय तथ्यात्मक घटनाक्रम पर होना चाहिए

lali Ram and anr. V. State of M.P., 2008 (10) JT, 67 Sc

Hon'ble Apex Court ovserved that a decision has to be considered in the background of the factual scenario. In criminal cases the question of a precedent particularly relating to appreciation of evidence is really of no consequence. The criminal cases are decided on the basis of facts and not on the basis of case law.

अनुसंधान में अनियमितता या अवैधता होने मात्र से शेष अभियोजन साक्ष्य अविश्वसनीय नहीं हो जाती है

Ambika Prasad & ors. v. Delhi administration, AIR 2000 SC 718, 2000(1) SCR342, 2000(2) SCC 646, 2000)1 SCALE 219, 2000(1)JT 273,

Hon'ble Apex Court ovserved that in a case of defective investigation it would not be proper to acquit the accused if the case is otherwise established conclusively. A criminal trial is meant for doing justice to the accused, victim and the society so that law and order is maintained. A judge does not preside over a criminal trial merely to see that no innocent

man is punished. A judge also presides to see that a guilty man does not escape. one is as important as the other. Bothe are public duties, which the Judge has to perform.

अनुसंधान अधिकारी के परीक्षित नहीं होने के कारण ही शेष साक्षीगण की साक्ष्य पर संदेह नहीं किया जाना चाहिए

Behari Prasad and ors. v. State of Bihar, [1996] 2 SCC 317,

this Court held that non examination of the investigating officer is not fatal to prosecution case especially when no prejudice was likely to be suffered by the accused.

Bahadur Naik v. State of Bihar, [2000] 9 SCC 153,

this Court held that when no material contradictions have been brought out., then non examination of the investigating officer as a witness for prosecution was of no consequence and under such circumstance no prejudice had been caused to the accused by such non examination.

अपराध के अनुरूप समुचित दण्ड अधिरोपित करना न्यायालय का कर्तव्य

Mulla & Anr. v. State of U.P., 2010 Cr. L.J. 1440 SC,

Hon'ble Apex Court observed that the punishment must fit the crime. it is the duty of the court to impose proper punishment depending upon the decree of criminality and desirability to impose such punishment. As a measure of social necessity and also as a means of deterring other potential offenders, the sentence should be appropriate befitting the crime.